RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2018-20

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 45, अंक : 22 एक प्रति 2 : रुपये
कुल पृष्ठ : 8
रविवार 1 सितम्बर, 2019
विक्रमी सम्वत् 2076, सृष्टि सम्वत् 1960853120
दयानन्दाब्द : 195 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
आजीवन शुल्क : 1000 रुपये
दूरभाष : 0181-2292926, 5062726
E-mail: apspunjab2010@gmail.com,
www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–45, अंक : 22, 29 अगस्त–1 सितम्बर 2019 तदनुसार 16 भाद्रपद, सम्वत् 2076 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

पाप पापी को लौट आता है

ले०–स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

असद् भूम्याः समभवत् तद् द्यामेति महद् व्यचः।
तद्वै ततो विधूपायत्प्रत्यक् कर्त्तारमृच्छतु।।

–अथर्व० ४।१९।६

शब्दार्थ–असत् = बुराई **भूम्याः** = भूमि से **समभवत्** = होती है। **तत्** = वह **महद्-व्यचः** = महाविस्तारवाली होकर **द्याम्** = आकाश को **एति** = जाती है। **तत्**= वह **वै** = सचमुच **ततः** = वहाँ से **विधूपायत्** = तपकर **प्रत्यक्** = उलटा **कर्त्तारम्** = कर्त्ता को **ऋच्छतु** = प्राप्त होती है।

व्याख्या–भूमि में प्रकाश नहीं है। भूमि अन्धकारमयी है। पाप अज्ञान में, अन्धकार में होता है। मनुष्य पाप करने के समय गुप्त स्थान खोजता है। वेद इस तत्त्व का वर्णन अपनी अलङ्कारमयी भाषा में करता है–**असद् भूम्या समभवत्**= पाप अन्धकार से होता है, किन्तु वह छिपा नहीं रहता। करते समय तो पाप छोटा-सा होता है, परन्तु–**तद् द्यामेति महद्व्यचः** = वह बड़े विस्तार वाला होकर आकाश तक जाता है, अर्थात् पाप की बात खुल जाती है और दूर-दूर तक फैल जाती है। इससे यह न समझना कि दूर तक फैलने से तुम उसके ताप से बच जाओगे। नहीं, कदापि नहीं, वरन्–

'तद्वै ततो विधूपायत् प्रत्यक् कर्त्तारमृच्छतु'= वह वहाँ और अधिक तपकर उलटा कर्त्ता को मिलता है। विदुर जी ने कहा है–**'एकः पापानि कुरुते फलं भुंक्ते महाजनः। भोक्तारो विप्रमुच्यन्ते कर्त्ता दोषेण लिप्यते'**= *[महा० उद्यो० ३३।४२]* पाप एक करता है, अर्थात् पाप करके पदार्थ लाता है, उसका उपभोग-उपयोग अनेक जन-सारा कुटुम्ब करता है। भोगने वाले पाप के भागी नहीं होते, हाँ, पाप का करने वाला दोषी होता है। **'प्रत्यक् कर्त्तारमृच्छतु'** और **'कर्त्ता दोषेण लिप्यते'** दोनों एक बात कह रहे हैं। भगवान् ने तो इससे भी [अथर्व० १२।३।४८] स्पष्ट बतलाया है–

न किल्बिषमत्र नाधारो अस्ति न यन्मित्रैः सह सममान एति।
अनूनं पात्रं निहितं न एतत् पक्तारं पक्वः पुनरा विशाति।।

कर्म में कमी नहीं होती, आश्रय (सिफ़ारिश=समर्थना) नहीं होती। मित्रों के साथ चलता हुआ भी अभीष्ट को नहीं पाता। यह हमारा कर्मपात्र अनून=अन्यून (जिसमें घटा-बढ़ी असम्भव है) रखा है। पकाने वाले को पका हुआ वापस आता है, अर्थात् किसी गुरु, पीर, पैग़म्बर के आधार से कर्मों में न घटा-बढ़ी होती है और न इसमें उलट-फेर होता है। कर्मों का फल कर्त्ता को ही मिलता है। इस तत्त्व को जानकर कर्म बहुत सावधानता से करने चाहिएँ। पाप से छूटने का उपाय भगवान् और ज्ञान का आराधन है।

यस्येदं प्रदिशि यद्विरोचते यज्जातं जनितव्यं च केवलम्।
स्तौम्यग्निं नाथितो जोहवीमि स नो मुञ्चत्वंहसः।।

–अथर्व० ४।२३।७

यह सारा-संसार जिसके आदेश में है, तो विशेष प्रकाशमान है, जो आनन्दमय था, है और होगा, उस प्रकाशस्वरूप भगवान् का स्तवन करता हूँ। उपतप्त हुआ, सन्ताप करता हुआ, पश्चात्ताप करता हुआ उसे पुकारता हूँ। वह हमें पापभाव से छुड़ावे। भगवान् शुद्ध है, अपापविद्ध है। मैं अशुद्ध हूँ, पापविद्ध हूँ। इस प्रकार स्तुति करने से मनुष्य पाप से बच जाता है।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत्।
दधद्रत्नानि दाशुषे।।

–पू० १.१.३.१०

भावार्थ–हे सर्वसुखदातः! आप दानशील हैं, इसलिए दानशील उदार भक्त पुरुष ही आपको प्यारे हैं। विद्यादाता को विद्या, अन्नदाता को अन्न, धनदाता को धन, आप देते हैं। इसलिए विद्वानों को योग्य है, कि आपकी प्रसन्नता के लिए, विद्यार्थियों को विद्या का दान बड़े प्रेम से करें, धनी पुरुषों को भी योग्य है कि योग्य सुपात्रों के प्रति धन, वस्त्रादिकों का दान उत्साह, श्रद्धा, भक्ति और प्रेम से करें। आपके स्वभाव के अनुसार चलने वाले सत्पुरुषों को आप सब सुख देते हैं। इसलिए हम सबको आपके स्वभाव और आज्ञा के अनुकूल चलना चाहिये तब ही हम सुखी होंगे अन्यथा कदापि नहीं।

कविमग्निमुप स्तुहि सत्यधर्माणमध्वरे।
देवममीवचातनम्।।

–पू० १.१.३.१२

भावार्थ–हे प्रभो! जिस आप जगत्पति के नियम से बँधे हुए, पृथिवी, सूर्य्य, चन्द्र, मंगल, शुक्र, शनि, बृहस्पति आदि ग्रह, उपग्रह अपने-अपने नियम में स्थित होकर अपनी-अपनी गति से सदा घूम रहे हैं। आप जगन्नियन्ता के नियम को तोड़ने का किसी का भी सामर्थ्य नहीं। ऐसे अटल नियम वाले सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, स्वप्रकाश, सुखदायक, रोग, शोकविनाशक, आप परमात्मा की, मुमुक्षु, पुरुष श्रद्धा भक्ति से प्रेम में मग्न होकर प्रार्थना और उपासना सदा किया करें, जिससे उनका कल्याण हो।

कस्य नूनं परीणसि धियो जिन्वसि सत्पते।
गोषाता यस्य ते गिरः।।

–पू० १.१.३.१४

भावार्थ–हे प्रभो! आपके जो परम प्यारे सुपुत्र और अनन्य भक्त हैं, अपनी अतिमनोहर अमृतभरी वाणी से, सदा आप प्रभु के ही गुणगण को गान करते हैं। भक्तवत्सल आप भगवान्, उन भक्तों को श्रेष्ठ बुद्धि से भरपूर कर देते हैं। आपकी अपार कृपा से जिनको उत्तम बुद्धि प्राप्त हुई है, वे अपने मन से ऐसा चाहते हैं, कि हे दया के भण्डार भगवन्! जैसी आपने हमको सद्बुद्धि दी है जिससे हम आपके भक्त और आपकी कृपा के पात्र बनें। ऐसी ही कृपा मेरे सब भ्राताओं पर कीजिये, उनको भी सद्बुद्धि प्रदान कीजिये, जिससे सब आपके प्यारे भक्त बन जायें, और सब सुखी होकर संसार भर में शान्ति के फैलाने वाले बनें।

वैदिक संस्कृति की विशेषता

ले.-शिवनारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा

संस्कारों पर आधारित आचरण ही संस्कृति है। संस्कार का अर्थ है किसी वस्तु के रूप को बदल देना, उसे नया रूप दे देना। चरक् ऋषि कहते हैं-संस्कारो हि गुणान्तरा-धानमुच्यते अर्थात् संस्कार पहले से वर्तमान दुर्गुणों को हटाकर उनकी जगह सद्गुणों का आधान कर देने का है और संस्कारों पर आधारित क्रिया कलाप संस्कृति कही जाती है। इस दृष्टि से 'संस्कार' मानव के निर्माण की योजना है। मानव के नव निर्माण हेतु जीव विज्ञान में भी वैज्ञानिक कार्यरत है। वैज्ञानिकों का कहना है कि वीर्य में जिस कोष्टक से शिशु का जन्म होता है उसमें कुछ ऐसे सूक्ष्म अणु होते हैं जिन्हें जीन्स कहा जाता है। ये जीन्स ही मनुष्य की लम्बाई, ऊंचाई, कालापन, गोरापन, बुद्धिमत्ता आदि गुणों अवगुणों के कारण होते हैं। अगर इन जीन्स को बदल दिया जावे, काले आदमी के उत्पादक कोष्ठ में काले रंग पैदा करने वाले जीन्स की जगह गोरा रंग पैदा करने वाले जीन्स की पैबन्द लगा दी जावे तो काले आदमी के गोरे बच्चे पैदा होंगे और उल्टा किया जावे तो गोरे आदमी के बच्चे काले हो जायेंगे। श्री हरगोबिन्द खुराणा को इस दिशा में अन्वेषण करने पर नोबल प्राइज मिला था।

एशिया में डा. हेफाख भी इसी दिशा में कार्यरत थे। हारवर्ड युनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों का कहना है कि उसमें अगर सफलता मिल गई तो वे अपूर्व प्रतिभाशाली व्यक्ति उत्पन्न कर सकेंगे। इंग्लैण्ड में भी इस दिशा में कार्य चल रहा है। डा. पेट्रिक स्टेपटो और डा. रोबर्ट एडवर्ड्स ने मिलकर एक स्त्री के उत्पादक कोष्ठ को टेस्ट ट्यूब में गर्भित करके उस स्त्री के शरीर में आरोपित कर दिया। ठीक समय बाद एक लड़की उत्पन्न हुई जो अभी जीवित है। वह ओल्डास अस्पताल में उत्पन्न हुई। वह संसार की सबसे पहली टेस्ट ट्यूब बेबी है। 24 अगस्त 1978 को उसे टेलीविजन पर दिखाया गया था। वैज्ञानिकों का कहना है कि जिस प्रकार लूसी उत्पन्न हुई उसी प्रकार प्रतिभाशाली व्यक्तियों के उत्पादक कोष्ठों के जीन्स में प्रतिभाशाली व्यक्तियों से संसार को भर दिया जायेगा। अगर यह विधि सफल रही तो अगर जीन्स की पैबन्द लगाकर शेक्सपीयर और आइंस्टाइन पैदा किया जा सकेंगे तो हिटलर, मुसोलिनी जैसे व्यक्ति भी पैदा किया जा सकेंगे। वैदिक संस्कार पद्धत्ति में यह खतरा नहीं है क्योंकि कोई माता पिता स्वयं अपनी सन्तान को राक्षस नहीं बनाना चाहते।

वैज्ञानिकों का प्रयत्न कृत्रिम है वैदिक ऋषियों का प्रयत्न स्वाभाविक या प्राकृतिक है!

परन्तु वेद में आचरण का विस्तृत वर्णन नहीं हुआ है। इस कार्य में हमें स्मृति व धर्मसूत्रों से सहायता लेना होता है। **श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः। मनु. 1.129**

परन्तु वेद के अनुरूप शिक्षा ही माननीय है। वेद निन्दक को नास्तिको वेदनिन्दकः। कहा गया है वेदों में सबसे अधिक बल सत्याचरण पर दिया गया है फिर यज्ञ वर्ण व्यवस्था तथा आश्रम व्यवस्था पर भी विस्तृत वर्णन है। यज्ञ के तीन स्कन्ध है-देव पूजा संगीतकरण एवं दान, शतपथ ब्राह्मण यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म मानता है। देव की परिभाषा शतपथ के अनुसार देवो दानाद्वा, दीपनाद्वा, द्योतनाद्वा, द्युस्थानो भवतीतिवा। यो देवः स देवता।

अर्थात् दान देने से, प्रकाश करने से, प्रकाशित होने से द्युस्थानीय होने से वे देव कहाते हैं। देव को ही देवता कहा जाता है। शतपथ 3.7.6.10 में कहा गया है-विद्वांसोहि देवा। देवता सदा सत्याचरण वाले होते हैं मनुष्य तो अनृत का व्यवहार भी कर लेते हैं इसलिये शतपथ कहाता है, सत्य मेव देवा अनृत मनुष्याः। शतपथ 1.1.1.5 शतपथ 2.2.2.6 में दो प्रकार के देवताओं का वर्णन है देव देव और मनुष्य देव। देव देव से अभिप्राय है कि यज्ञ में जिस देवता के नाम का उल्लेख कर आहुति दी जाती है वह देव देव है जैसे अग्नये स्वाहा, सोमाय स्वाहा, इन्द्राय स्वाहा, प्रजापतये स्वाहा में अग्नि सोम, इन्द्र और प्रजापति देव देव हैं और यज्ञ का सम्पादन करने वाले ऋत्विग्, उद्गाता, ब्रह्मा मनुष्य देव हैं। देव देव को आहुति से तथा मनुष्य देव को दक्षिणा देकर सन्तुष्ट किया जाता है। यजुर्वेद में भी दो प्रकार के देवता माने गये हैं जड़ देवता और चेतन देवता।

अग्नि देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वरूणो देवता रूद्रो देवताऽऽदित्या देवता मरूतो देवता विश्वे देवा देवता बृहस्पति र्देवतेन्द्रो देवता वरूणो देवता।

यजु. 14.20

तैत्तिरीय उपनिषद में कहा गया है-देव पितृ कार्याभ्यां न प्रमादितव्यम्। मातृ देवो भव। पितृ देवो भव। आचार्य देवो भव। अतिथि देवो भव। तैति.उप.शिक्षा वल्ली एकादश अनु श्लोक 2. देव तथा पितर गणों की सेवा में कभी प्रमाद मत करो। इनकी सेवा के लिये सदैव तत्पर रहो। अथर्व. 18.4.44 में कहा गया है-हे मनुष्य यह पहला और पिछला निश्चित मार्ग है जिससे तेरे पहले पितर लोग गये हैं। जो इस मार्ग पर चलने वाले और सब प्रकार के उपदेश करने वाले हैं, वे पितर लोग तुमको सुकर्मियों के समाज में ही पहुंचाते हैं। फिर उनका सम्मान कैसे करें।

आच्यौ जानु दक्षिणतो निषद्यदं नो हविरभिगृणन्तु विश्वे मा हिंसिष्ट पितरः

केन चिन्नो यद्व आगः पुरूषता कराम। अथर्व. 18.1.52

स्वाभाविक इसलिए है क्योंकि अब तक प्रकृति इसी उपाय से मनुष्य में परिवर्तन करती रही है। अगर बालक को उत्तम परिस्थिति से घेर दिया जाये तो वह अच्छे संस्कारों के कारण अच्छा बन जाता है और यदि बुरे संस्कारों से घेर दिया जाए तो बुरा बन जाता है। यह उपाय माता पिता के हाथ में है। वैज्ञानिक उपाय टेस्ट ट्यूब द्वारा उत्तम जीन्स के संग्रह में से जीन्स छांट छांट कर एक तरह के आपरेशन के द्वारा नव मानव का निर्माण करना है! इस प्रकार के कुछ प्रयत्नों का महाभारत में भी वर्णन है जैसे धृतराष्ट्र के वीर्य से घड़े में से सौ पुत्र उत्पन्न होना तथा मित्र वरूण के संयुक्त उत्पादक कोष्ठों से उर्वशी द्वारा वसिष्ठ का पैदा होना। कुछ कटु अनुभवों के बाद ऐसे बालक पैदा करना बन्द कर दिया।

संस्कारों द्वारा मानव नव निर्माण के दृष्टान्त-

1. मदालसा का दृष्टान्त-मदालसा अपनी गर्भावस्था में गाया करती थी 'शुद्धोसि, निरंजनोसि संसार माया परिवर्जितोसि' तू शुद्ध है, बुद्ध है, संसार की माया से निर्लिप्त है इन संस्कारों के कारण उसकी आठों सन्तानें ब्रह्मर्षि बन गई। उसके पति ने जब कहा कि इस प्रकार वंश कैसे चलेगा तब नवें पुत्र के उत्पन्न होने के समय मदालसा ने अपनी विचारधारा बदल दी और नवा पुत्र सर्व गुण सम्पन्न क्षत्रिय हुआ।

2. सुभद्रा का दृष्टान्त-अर्जुन ने सुभद्रा को जब वह गर्भवती थी तब चक्रव्यूह के भीतर प्रवेश करने की विधि बताई थी परन्तु सुभद्रा को नींद आ जाने के कारण उसमें से निकल आने की विधि रह गई थी। इसके प्रभाव से अभिमन्यु चक्रव्यूह में प्रवेश तो कर गया परन्तु उसमें से बाहर नहीं निकल सका।

3. नेपोलियन का दृष्टान्त-कहा जाता है कि जब नेपोलियन माता की गर्भ में था तब उसकी माता को सेनाओं की परेड देखने की लत थी। जब वह सैनिकों की परेड देखती और उन्हें सैनिक गीत गाते सुनती तो वह प्रफुल्लित हो उठती थी। इन संस्कारों से नेपोलियन एक महान् योद्धा बना।

4. प्रेजीडेन्ट गारफील्ड के हत्यारे गीटू का दृष्टान्त-जब गीटू माता के गर्भ में था तब माता ने गर्भपात कर उसकी हत्या करने का प्रयत्न किया। वह गर्भपात तो न कर सकी परन्तु उसने गीटू को हत्यारा बना दिया।

वैदिक संस्कृति को जानने के लिए वेदों का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है।

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्।
मनु. 1.125

हे पितृ गण आप सब घुटना टेक कर और दाहिनी ओर बैठकर हमारे इस ग्राह्य अन्न को बढ़ाई योग्य करें। उस किसी अपराध के लिये हमें अपने पुरूष पन से दुःख न दें।

मातृ पितृ तद बन्धूना पूर्व जनां विद्या गुरूणां तद् गुरूणां च। गोतम धर्म सूत्र 1.6.3

माता, पिता, बड़े भाई, गुरू और गुरू के गुरू की चरण वन्दना करे अर्थात् विनीत होकर चरण स्पर्श करे।

पादोप संग्रहणं समवाये-ऽन्वहम्। गो.ध.सू. 1.6.1

प्रतिदिन माता पिता के मिलने पर उनके चरण छूना चाहिये।

नोप संग्रहणं भातृ भार्याणां स्वसृणाम्। गो.ध.सू.1.6.8

बड़े भाई की पत्नी तथा छोटी बहिन के पैर न छूकर दूर से ही अभिवादन करना चाहिये। मनु. 2.71 में कहा गया है कि वेदारम्भ करने से पूर्व गुरू के चरणों को नमस्कार करे फिर दोनों हाथ जोड़ कर अभिवादन करे और गुरू से पढ़ना

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

वेदानुसार वर्ण व्यवस्था और आश्रम व्यवस्था का पालन करें

वेदों के अनुसार समाज और राष्ट्र को सुसंगत और सुव्यवस्थित करने के लिए मनुष्यों को गुण, कर्म, स्वभाव भेद से चार प्रकार के कार्यों , जिन्हें वर्ण कहा गया है, उन चारों में से किसी एक को अपनाने के लिए प्रेरित किया गया है। ये चार प्रकार के वर्ण हैं-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। ये चार वर्ण जन्म से नहीं, किन्तु कर्म की प्रधानता के लिए माने गए हैं। कर्म की व्यवस्था मनुष्य की योग्यता और सामर्थ्य के अनुसार निर्धारित की गई है। प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्वतन्त्रता है कि किस वर्ण को पसन्द करता है और उसको क्या वह अच्छी प्रकार से निर्वाह कर सकेगा? परन्तु खेद है कि मध्य काल में जब से यह जन्ममूलक वर्ण-व्यवस्था आरम्भ हुई है, तब से समाज में अनेक विकृत्तियाँ, जैसे पारस्परिक भेद-भाव, ऊँच-नीच का भाव, छुआ-छूत का भेद, घृणा, विद्वेष, संघर्ष आदि ने जन्म लिया और एक आर्य जाति में फूट प्रारम्भ हो गई। परिणामस्वरूप उससे टूटकर अनेक तथाकथित जन्ममूलक वर्ण के लोग विधर्मी हो गए और इस्लाम या ईसाई मत ग्रहण कर मुसलमान या ईसाई बन गए। इसका परिणाम यह हुआ कि हमारा विशाल देश भारत हजारों वर्षों तक विदेशियों के शासन कुचक्र में दासता का जीवन जीने के लिए मजबूर हो गया। सोने की चिड़िया कहलाने वाला भारतवर्ष विनाश और पतन के कगार पर खड़ा होकर अनेक टुकडों में बंट गया। जिस देश की गौरव गाथा चारों दिशाओं में गुंजायमान थी, वही विदेशियों का गुलाम हो गया। इन अत्याचारों के परिणामस्वरूप ईश्वरकृपा से देश में नवजागरण काल का उदय हुआ और उसमें अगणित बलिदानियों के त्याग से भौगोलिक दृष्टि से खण्डित भारत स्वतन्त्र हुआ परन्तु अब भी जन्ममूलक इस वर्ण-व्यवस्था का विघटनकारी रोग समाप्त नहीं हुआ है। यद्यपि अनेक महापुरूषों ने इस रोग को दूर करने का प्रयास किया तथापि यह समाप्त होने का नाम नहीं ले रहा है। इसका निराकरण तो तभी सम्भव है, जबकि व्यक्ति की रूचि, गुण, कर्म की योग्यता और श्रेष्ठ धार्मिक विद्वानों एवं गुरूकुलों के आचार्यों की सहमति तथा संस्तुति के आधार पर वर्ण का निर्धारण हो। **नान्यः पन्था विद्यते अयनाय** यही वैदिक व्यवस्था है।

वैदिक वर्ण-व्यवस्था विज्ञानयुक्त, स्वाभाविक और पारस्परिक भेदभाव से रहित है, जैसा कि वेद में कहा गया है-

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।।

यह मन्त्र ऋग्वेद और यजुर्वेद के पुरूष सूक्त का मन्त्र है। इसमें समाज के चार प्रमुख अंगों की मनुष्य शरीर के अंगों से उपमा दी गई है। जैसे मनुष्य शरीर में सब से उच्च और प्रधान अंग मुख अर्थात् शिर या मस्तिष्क ज्ञान का भण्डार है, उसी प्रकार समाज में सिर के समान ज्ञान प्रधान मनुष्य या मनुष्य समुदाय ब्राह्मण नाम के वर्ण से सम्बोधित किया जाना चाहिए। इसी प्रकार शरीर में दोनों भुजाएं जैसे बल प्रधान होने पर रक्षा करने योग्य की रक्षा करने और दण्डित करने योग्य को दण्डित करने में समर्थ मानी जाती हैं, उसी प्रकार समाज में सुव्यवस्था स्थापित करने के लिए और शासन के विधि-नियमों के अनुसार सेना, पुलिस और पक्षपात रहित न्याय के द्वारा प्रशासन करने वाला द्वितीय वर्ण क्षत्रिय नाम से सम्बोधित किए जाने योग्य है। तीसरा शरीर का मध्य भाग जैसे उदर, खाए हुए अन्न को रस, रक्त, मांस, अस्थि इत्यादि सात प्रकार के धातुओं में विभक्त करने का कार्य करता है, उसी प्रकार समाज का तीसरा अंग वाणिज्य-व्यापार प्रधान होने से वैश्य कहा जाता है। वैश्य के कर्त्तव्य कर्मों में कृषि तथा गाय, घोड़ा, बकरी, भेड़ आदि पशुओं का पालन भी समाविष्ट है। शरीर का चतुर्थ अंग पैर है, जो शरीर के तीनों अंगों - शिर, भुजाएँ और उदर-कमर जंघा आदि को थामे रहता है, तथा चलने का कार्य करता है। उसी प्रकार समाज में जो लोग न ज्ञान और विशेष बुद्धि का कार्य कर सकते है, न बल सम्बन्धी कार्य कर सकते हैं और न वाणिज्य व्यापार अथवा कृषि गोपालन का कार्य ही कर सकते हैं। वे उक्त तीनों वर्णों की सेवा और शारीरिक परिश्रम का कार्य करने के कारण शूद्र वर्ण के नाम से सम्बोधित किए गए हैं। इन चारों वर्णों के गुण, कर्मों का विस्तृत विधान वेदादि साहित्य से लेकर मनुस्मृति, धर्मसूत्रों, गृह्यसूत्रों, भगवद्गीता आदि में देखा जा सकता है।

ये चारों वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वर्ण हैं, जाति नहीं। वर्ण का अर्थ है वरण करने योग्य, स्वीकार करने योग्य। कार्यविशेष को करने की प्रबल इच्छा और उसके लिए योग्यता का होना वर्ण अपनाने का हेतु माना गया है। जैसे शरीर के चारों अंग आपस में मिलजुल कर एक होकर कार्य करते हैं, और पूरे शरीर को सुख पहुँचाते हैं, उसी प्रकार समाज के ये चारों वर्ण- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आपस में मिलजुल कर सम्पूर्ण समाज में एकता बनाए रखते हुए समाज को सुखी और प्रसन्न करते हैं। मनुष्य रूप में एक समान होने और ब्राह्मणादि चारों वर्णों के परस्पर के कार्यों में कुछ-कुछ भेद होने पर भी परस्पर संघर्ष नहीं होना चाहिए। यह वर्णव्यवस्था वैदिक पद्धति पर आधारित होने के कारण शुद्ध है। शूद्र वर्ण का व्यक्ति अगर अपने अन्दर योग्यता पैदा कर लेता है तो वह अपना वर्ण परिवर्तन करके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य कहलाने का अधिकारी हो जाता है। इसलिए यह वर्ण व्यवस्था जन्मना नहीं कर्मणा आधारित है। यदि ब्राह्मण वर्ण के व्यक्ति का बालक अपने अन्दर विद्या के द्वारा योग्यता को प्राप्त नहीं करता है तो वह भी शूद्र कहला सकता है। इसी प्रकार वैदिक वर्ण व्यवस्था में जिस -जिस वर्ण की योग्यता व्यक्ति के अन्दर होती है वह उसी वर्ण के अनुसार कहलाने का अधिकारी है। कोई भी वर्ण अपने कर्म के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य बन सकता है। इन तीनों कर्मों से हीन व्यक्ति शूद्र है।

वैदिक धर्म में चार वर्णों के साथ-साथ ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास नामक चार आश्रमों का विधान भी वेदसम्मत है। सौ वर्ष की औसत आयु को पच्चीस-पच्चीस वर्षों में विभाजित करके इस आश्रम व्यवस्था को अपनाने का निर्देश है। इनमें गृहस्थाश्रम को छोडकर अन्य तीन आश्रमों में ब्रह्मचर्य आश्रम जो मुख्यतः वेद विद्याध्ययन और यम-नियमादि योग के अंगों को दृढ़ता से पालन करने की शिक्षा ही मुख्य है, जो एक स्वस्थ नीरोग और दीर्घ जीवन के साथ-साथ परमार्थ की सिद्धि का मूल माना गया है। गृहस्थाश्रम में युवावस्था में स्त्री पुरूष का विवाह, धर्मानुसार सन्ताओं की उत्पत्ति, उनका पालन, शिक्षा दीक्षा, दया दानादि अनेक शुभ कर्मों को करने का शास्त्रों में विधान है। गृहस्थ के पश्चात वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम में स्वाध्याय करते हुए, वेदाध्ययन करते हुए, त्याग और तपस्या की जीवन बिताते हुए समाज का उपकार करने का शास्त्रों में वर्णन किया गया है।

जब तक समाज में कर्म पर आधारित वर्ण-व्यवस्था और आश्रम-व्यवस्था का प्रचलन था तब तक समाज इस जातिवाद के जहर से कोसों दूर था। भारतवर्ष के पतन का कारण अनेक जातियों में विभक्त हो जाना था। वर्तमान में भी अगर राष्ट्र को उन्नति के पथ पर ले जाना है तो इस जातिवाद को खत्म करना होगा। राजनीतिक दल चुनावों में वोट प्राप्त करने के लिए जाति के आधार पर लोगों को बांटने का कार्य करते हैं जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्र उन्नति के स्थान पर अवनति की ओर अग्रसर हो जाता है। इसीलिए आज आवश्यकता है कि वेद आधारित वर्ण-व्यवस्था के अनुसार समाज को उन्नत एवं खुशहाल बनाएं और इस जातिवाद के भंयकर जहर से राष्ट्र को बचाएं।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

अग्निहोत्र यज्ञ एक आध्यात्मिक एवं पूर्ण कल्याणप्रद कर्म है

ले.-मनमोहन कुमार आर्य देहरादून

वैदिक धर्म का आरम्भ ईश्वर प्रदत्त वेदज्ञान से सृष्टि के आरम्भ में अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न ऋषियों व मनुष्यों से हुआ। ईश्वर सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान तथा सर्वानन्द युक्त सत्ता है। उसका दिया हुआ वेद ज्ञान इस सृष्टि का सत्य ज्ञान है। ईश्वर ने सृष्टि क्यों बनाई है और मनुष्यों को क्या कर्त्तव्य है इसका पूरा ज्ञान वेदों में दिया गया है। वेदों में ईश्वर के सत्य स्वरूप का ज्ञान दिया गया है और इसके साथ ही ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना तथा उपासना करने तथा वायु जल पर्यावरण की शुद्धि हेतु गोघृत तथा वनौषधि आदि पोषक पदार्थों से अग्निहोत्र यज्ञ करने का विधान किया है। सृष्टि के आरम्भ से ईश्वर की उपासना एवं अग्निहोत्र यज्ञ की परम्परा चली आ रही है। महाभारत युद्ध के बाद यज्ञ की परम्परा कुछ विकृतियों को प्राप्त हो गई थी परन्तु ऋषि दयानन्द के आने पर वेदों का पुनरूद्धार हुआ और अग्निहोत्र यज्ञ सहित सभी वेद पोषित प्रथाएं पुनः अपने शुद्ध व हितकारी स्वरूप के साथ प्रचलित हुई। मनुष्य की आध्यात्मिक, शारीरिक एवं भौतिक उन्नति सहित उसके निरोगी एवं स्वस्थ रहने के लिये अग्निहोत्र यज्ञ की महत्वपूर्ण भूमिका है। ऋषि दयानन्द ने बताया है कि जब तक भारत में सभी घरों में अग्निहोत्र यज्ञ हुआ करता था तब तक हमारा देश सभी सुखों से पूरित था। यदि अब भी हमारा देश व विश्व अग्निहोत्र यज्ञ को अपना ले तो पुनः सभी मनुष्य दुखों व तनावों से मुक्त तथा सुख एवं शान्ति से युक्त हो सकते हैं। यज्ञ से अनेक लाभ होते हैं। यज्ञ में देवपूजा, संगतिकरण एवं दान का समन्वय किया जाता है। देवपूजा से मनुष्य ईश्वर सहित विद्वानों की संगति कर उनके ज्ञान एवं अनुभवों से लाभान्वित होता है। दान में हम विद्वानों से उनके ज्ञान एवं अनुभव प्राप्त करते हैं तथा हमें अन्यों के दुख दूर करने और सुख पहुंचाने की प्रेरणा भी मिलती है। यह एक ऐसा कृत्य है कि इससे होने वाले लाभों को अन्य किसी उपाय से प्राप्त नहीं किया जा सकता है। इससे ईश्वर सहित सभी विद्वजन प्रसन्न एवं संतुष्ट होते हैं। वायु एवं जल आदि जड़ देवताओं को भी इससे पोषण प्राप्त होता है। अतः सभी मनुष्यों को यज्ञीय कार्यों को यथोचित महत्व देना चाहिये। यज्ञ अनेक प्रयोजनों व अनेक नामों से किया जाता है। गृहस्थियों के लिये दैनिक देव यज्ञ का विधान है जिसे प्रातः व सायं दोनों समय किया जाता है। महर्षि दयानन्द ने पंचमहायज्ञ विधि एवं संस्कार विधि ग्रंथों की रचना की है व इनमें यज्ञ की विधि पर विस्तार से प्रकाश डाला है। वेदों में यज्ञ करने के स्पष्ट निर्देश हैं। यज्ञ करने से मनुष्य की सभी उचित प्रार्थनाएं एवं इच्छाएं पूरी होती है। यज्ञ में समिधादान का प्रथम तथा पंचघृताहुति के मंत्र समान हैं। स्विष्ट कृदाहुति का मंत्र भी एक विशिष्ट मंत्र है जिसमें ईश्वर से हमारी अनेक प्रकार की आवश्यकताएं एवं इच्छाएं पूरी करने की प्रार्थना की गई है। हम इन दोनों मंत्रों के अर्थ यहां प्रस्तुत कर रहे हैं। समिधादान एवं पंच घृताहुति मंत्र से प्रार्थना की जाती है कि सब पदार्थों में विद्यमान परमेश्वर मेरी आत्मा अग्निस्वरूप परमेश्वर, आप मुझ में प्रकाशित हूजिए। और मेरे इस यज्ञ को तथा मुझे बढाइए। मुझे पुत्र-पौत्र, सेवक आदि अच्छी प्रजा से, गौर आदि पशुओं से, वेद विद्या के तेज से और धन धान्य सहित घृत, दुग्ध, अन्न आदि से समृद्ध करें। यह घृत आहुति सर्व व्यापक परमेश्वर की प्रसन्नता के लिये मैं दे रहा हूं। यह लिये न होकर समाज व प्राणी समूहों के कल्याण के लिये है। स्विष्टकृदाहुति मंत्र से दी जाने वाली घृत आहुति में यजमान ईश्वर से प्रार्थना करता है कि मैंने अपने इस यज्ञ में जो विधि से अधिक अथवा न्यून कर्म किया है अनजाने में हुई इस त्रटि के लिये ईश्वर मुझे क्षमा करें। सब प्राणियों की इच्छाओं को जानने वाला परमेश्वर मेरी सभी शुभ इच्छाओं को पूर्ण कर देवे। प्राणियों की शुभ इच्छाओं को पूर्ण करने वाले यज्ञ को सफल बनाने वाले तथा प्रायश्चित रूप में दी गई आहुतियों को स्वीकार करने तथा यजमान की कामनाओं को पूर्ण करने वाले परमेश्वर के लिये यह स्विष्ट कृदाहुति हमने दी है। परमात्मा हमारी सब कामनाओं को पूर्ण करे तथा मेरा यज्ञ सफल हो। इन दो मंत्रों के द्वारा की गई प्रार्थनाओं से यह विदित होता है कि यज्ञ का प्रयोजन एवं लाभ क्या है? यह लाभ व प्रयोजन अन्य किसी साधन से पूरे नहीं होते हैं। अतः यज्ञ करना हमारा कर्त्तव्य है एवं अपने पूरे परिवार, समाज व स्वदेश को सुखी व उन्नत बनाने का सरलतम साधन कहा व माना जा सकता है।

अग्निहोत्र यज्ञ के आरम्भ में हम आचमन तथा इन्द्रिय स्पर्श करते हैं जिससे यज्ञ का प्रयोजन ज्ञात होने सहित हम ईश्वर से शरीर व इन्द्रियों को निरोगी व स्वस्थ रखने की प्रार्थना करते हैं। यह प्रार्थना ऐसी ही होती है जैसे कि कोई छोटा निष्पाप बच्चा अपनी माता से कहे कि उसे भूख लगी है, उसे भोजन दे दो। माता उसकी प्रार्थना स्वीकार कर उसे भोजन कराती है। परमात्मा भी हमारी माता के समान है। वह भी हमारी प्रार्थना को पूरी करते हैं। इसके बाद हम ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना तथा उपासना के मंत्रों सहित स्वस्तिवाचन एवं शान्तिकरण के मंत्रों का पाठ भी करते हैं। इन मंत्रों में श्रेष्ठ एवं उच्च कोटि की प्रार्थनाओं सहित इनसे ईश्वर की स्तुति व उपासना भी होती है। उपासना के लाभ ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में वर्णित किये हैं। उपासना से हमारे दुर्गुण दुर्व्यसन एवं दुखों की निवृत्ति होती है और ईश्वर के अनुरूप गुणों का ग्रहण एवं धारण होता है। एक प्रकार से यह संस्कार देने एवं चरित्र निर्माण की प्रक्रिया है। इससे मनुष्य का जो जीवन व चरित्र सुधरता व बनता है वह अन्य किसी प्रकार से नहीं बनता है। ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना सहित स्वस्तिवाचन एवं शान्तिकरण के मंत्रों से मनुष्य को सच्चा आध्यात्मिक जीवन जीने का अवसर मिलता है। अन्य मतों के लोग इस प्रक्रिया से दूर होने के कारण आंशिक एवं छोटी मात्रा में ही आध्यात्मिक होते हैं जबकि वैदिक धर्मी पूर्णरूपेण धार्मिक एवं आध्यात्मिक जीवन का धनी होता है। कई मत तो ऐसे हैं जो आध्यात्मिक कम अनाध्यात्मिक अधिक हैं एवं दूसरों के प्रति मानवीय संवेदनाओं से रहित हैं। विज्ञ लोग इसकी समीक्षा एवं विश्लेषण करके देख सकते हैं। अग्निहोत्र देवयज्ञ में चार प्रकार के द्रव्यों का यज्ञकुंड की अग्नि में आहुति देने का विधान है। यह है गौघृत, केसर व कस्तूरी आदि सुगन्धित पदार्थ, वनौषधि, वनस्पतियां, सोमलता व गुग्गल आदि औषधियां, मिष्ट एवं बल देने वाले शुष्क पोषक फल आदि। इन पदार्थों की यज्ञ की प्रचंड अग्नि में मंत्र बोल कर आहुति देने से एक और जहां अग्नि उस आहुत द्रव्य को सूक्ष्म व हल्का बनाती है वहीं तीव्र अग्नि से उनकी भेदन शक्ति व सामर्थ्य में वृद्धि होने से उन सूक्ष्म पदार्थों को पूरे वातावरण में फैला देती है। इससे इन पदार्थों के समन्वित गुणों का लाभ यजमान व यज्ञ के समीप उपस्थित लोगों सहित दूर दूर तक के प्राणियों को होता है। यज्ञ करने से रोग उत्पन्न करने वाले अनेक कीटाणुओं का नाश भी होता है। प्राण वायु की गुणवत्ता में वृद्धि होने से भी यह स्वास्थ्यप्रद होती है। जिन मंत्रों को यज्ञ में बोला जाता है उसमें भी ईश्वर से भिन्न भिन्न प्रार्थनाएं होती हैं जिससे परमात्मा से हमें उन प्रार्थनाओं के अनुरूप सुख लाभ प्राप्त होता है। यज्ञ का हमारी बुद्धि व ज्ञान की वृद्धि पर भी अनुकूल प्रभाव होता है। यज्ञ मनुष्य की सभी कामनाओं को सिद्ध करने वाला उपाय व साधन है। जो मनुष्य यज्ञ करता है वह निर्धन नहीं होता। यज्ञ करने का लाभ इस जन्म में भी होता है और इससे हमें मृत्यु के बाद भी उत्तम योनि व उत्तर परिवेश में मनुष्य का दैवीय गुणों से युक्त परिवारों में जन्म होता है जहां हमें धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की पूर्ति की सुविधाएं प्राप्त होती हैं। यज्ञ का प्रभाव सन्तानों पर भी पड़ता है। सन्तानें माता पिता व परिवार के बड़े सदस्यों की आज्ञाकारी बनती है। यज्ञ हमें बताता है कि हमारे माता पिता व आचार्यगण सभी देव हैं। हमें इनके प्रति जीवन भर कृतज्ञ रहना है व इनके ऋण से उऋण होने के लिये इनकी हर प्रकार से सेवा सुश्रुषा करनी है। जिस राष्ट्र में बहुतायत जनता यज्ञ करती है उस देश में सुख व समृद्धि होती है। हमारे देश के पूर्वजों ने अतीत में शताब्दियों तक यज्ञ आदि सुकर्म किये हैं। इनका प्रभाव आज भी देश में विद्यमान है। अतीत में ईश्वर तथा उसकी प्राप्ति के साधनों के ज्ञान के कारण हमारा देश विश्व गुरू था। इसमें यज्ञ का भी महत्वपूर्ण स्थान था। आज हमारा देश योग आदि के द्वारा आध्यात्मिक क्रान्ति की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है। यज्ञ भी आध्यात्मिक क्रान्ति में प्रमुख स्थान रखता है। बिना वेदों के प्रचार व प्रसार तथा उसके अनुकुल देश व विश्व के लोगों के आचरण के मनुष्य व समाज की दिशा व दशा नहीं बदल सकती। यज्ञ इन सब कार्यों को प्राप्त कराने में एक उपयोगी एवं महत्वपूर्ण साधन है। शास्त्रों ने कहा है कि यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म है। यज्ञ से श्रेष्ठतम कोई कर्म नहीं है। यह भी हमारे प्राचीन विद्वान बता गये हैं कि यदि हम सुख व स्वर्ग के समान अपने घर का वातावरण बनाना चाहते हैं तो हमें यज्ञ अवशख्य करना चाहिये। यज्ञ को इस भुवन की नाभि भी बताया गया है। अग्निहोत्र यज्ञ से मनुष्य को निश्चित रूप से अनेकानेक लाभ होते हैं। यज्ञ कर्त्ता सुखी, स्वस्थ एवं दीर्घायु होने सहित अभावों से मुक्त रहता तथा जीवन के सभी क्षेत्रों में उन्नति करता है। अतः सभी स्त्री पुरूषों को यज्ञ की शरण में आना चाहिये। इसके कारण में ही विश्व का व प्रत्येक मनुष्य का कल्याण निहित है। यह ध्रुव सत्य है।

यज्ञ में ऋत्विज एवं दक्षिणादि

ले.-महात्मा चैतन्यस्वामी, महर्षि दयानन्द धाम-सुन्दर नगर

(गतांक से आगे)

उपरोक्त संस्कारित गोघृत एवं सामग्री तथा तद्नुसार समिधाओं का प्रयोग करना चाहिए। यज्ञादि की सार्थकता तभी सिद्ध हो सकेगी जब घी, सामग्री व समिधा आदि की उत्कृष्ठता, स्वच्छता, यजमान की श्रद्धा तथा ऋत्विजों की योग्यता एवं पवित्रता शास्त्रानुसार होगी। महर्षि कहते हैं-'एक सुगन्धगुणयुक्त, जो कस्तूरी केशरादि हैं, दूसरा मिष्टगुणयुक्त, जो कि गुड़ और शहद आदि कहाते हैं, तीसरा पुष्टिकारकगुणयुक्त, जो घृत, दुग्ध और अन्न आदि हैं, और चौथा रोगनाशकगुणयुक्त जो कि सोमलता औषधि आदि है। इन चारों का परस्पर शोधन, संस्कार और यथायोग्य मिलाके अग्नि में युक्तिपूर्वक जो होम किया जाता है, वह वायु और वृष्टि की शुद्धि करने वाला होता है।... परन्तु होम के द्रव्यों का उत्तम संस्कार और होम के करने वाले मनुष्यों को होम करने की श्रेष्ठ विद्या अवश्य होनी चाहिए। सो इसी प्रकार के यज्ञ करने से सबको उत्तम फल प्राप्त होता है, विशेष करके यज्ञकर्त्ता को, अन्यथा नहीं। महर्षि लिखते हैं-(ऋ०भा० भूमिका वेद विषय विचार) 'इसलिए यज्ञ का अर्थवाद यह है कि अनर्थ दोषों को हटाके जगत् में आनन्द को बढ़ाता है परन्तु होम के द्रव्यों का उत्तम संस्कार और होम के करने वाले मनुष्यों को होम करने की श्रेष्ठ विद्या अवश्य होनी चाहिए...' यज्ञों में सामान्यत: चार ऋत्विग् होते हैं जिन्हें ब्रह्मा, होता, अध्वर्यु और उद्गाता कहा जाता है। ये व्यक्ति योग्यतम्, सदाचारी विद्वान् होने चाहिए। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी इस सम्बन्ध में (सं०वि०) कहते हैं-'अच्छे विद्वान् धार्मिक जितेन्द्रिय कर्म करने में कुशल निर्लोभ परोपकारी दुर्व्यसनों से रहित कुलीन सुशील वैदिक मत वाले वेदवित् एक दो तीन अथवा चार का वरण करें। जो एक हो तो उसका पुरोहित, और जो दो हों तो ऋत्विक् पुरोहित, और 3 तीन हों तो ऋत्विक् पुरोहित और अध्यक्ष, और जो चार हों तो होता अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा। इनका आसन वेदी के चारों ओर, अर्थात् होता का वेदी से पश्चिम आसन पूर्व मुख, अध्वर्यु का उत्तर आसन दक्षिण मुख, उद्गाता का पूर्व आसन पश्चिम मुख, और ब्रह्मा का दक्षिण आसन उत्तर में मुख होना चाहिए। और यजमान का आसन पश्चिम में और वह पूर्वाभिमुख, अथवा दक्षिण में आसन पर बैठ कर उत्तराभिमुख रहे। और इन ऋत्विजों को सत्कारपूर्वक आसन पर बैठाना, और वे प्रसन्नतापूर्वक आसन पर बैठें। और उपस्थित कर्म के बिना कर्म वा दूसरी बात कोई भी न करे।' ऋग्वेद में एक मन्त्र आया है-

ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वा-
न्गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु।
ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां
यज्ञस्य मात्रां वि मिमीत उ त्वः।।

(ऋ०10-71-11)

चार ज्ञानी ऋत्विक् ही सब यज्ञादि कार्यों को सम्पन्न कराते हैं। उनमें से एक होता जो ऋचाओं का यथाविधि कर्मों में प्रयोग करता हुआ, दूसरा उद्गाता जो गायत्र साम को शक्वरी नाम वाली ऋचाओं द्वारा, तीसरा ब्रह्मा सर्ववेत्ता विशेषत: अर्थवेद के द्वारा दोषों को दूर करने वाला और चौथा अध्वर्यु यजुर्वेद का विशेष ज्ञाता बनकर यज्ञ की मात्रा को मापता है... इस प्रकार यहां संकेत किया गया है कि ऋत्विजों में सभी एक-एक वेद के ज्ञाता तो होने ही चाहिएं। होता ऋग्वेद का, उद्गाता सामवेद का, अध्वर्यु यजुर्वेद का और ब्रह्मा चारों वेदों का विशेषत: अथर्ववेद का ज्ञाता होना चाहिए। ब्रह्मा की आज्ञा पाकर ही होतृगण देव आवाहन करते हैं (कात्या०श्रौत०3-5-5) गोपथ ब्राह्मण के अनुसार ब्रह्मा को अथर्ववेद का ज्ञाता होना चाहिए (गो० ब्रा०1-1-2-18) मनुजी ने (मनु०2-118) लिखा है-'जो ब्राह्मण किसी के द्वारा वरण किए जाने पर उस वरण करने वाले के अग्निहोत्र, बलिवैश्वदेव आदि तथा पूर्णिमा आदि विशेष उपलक्ष्यों पर किए जाने वाले यज्ञों को अग्निष्टोम आदि बड़े यज्ञों को करता है वह उस वरण करने वाले का 'ऋत्विक्' कहलाता है। ऋत्विजों के सम्बन्ध में पितामह कहते (महा०शा०प०) हैं-'जो ब्राह्मण छन्दशास्त्र, 'ऋक्, साम और यजु' नामक तीनों वेद और ऋषि-प्रणीत स्मृति एवं दर्शन-शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं, वे ही ऋत्विज होने योग्य हैं। उन ऋत्विजों का मुख्य आचार है-राजा के लिए 'शान्ति' व 'पौष्टिक' आदि कर्मों का अनुष्ठान्।' इसी क्रम में वे पुरोहित के बारे में कहते हैं-वह यजमान के हितसाधन में तत्पर रहने वाला, धीर, प्रियवादी, सुहृद, समान-दृष्टि, क्रूरतारहित, सत्यवादी, सरल, व्याज न लेने वाला, जो द्रोही और अभिमानी न हो, लज्जाशील, सहनशील, इन्द्रियसंयमी और मनोनिग्रही हो।' ब्रह्मा के बारे में कहा गया है-जो बुद्धिमान् सत्य को धारण करने वाला, जितेन्द्रिय, किसी भी प्राणी की हिंसा न करने वाला और राग-द्वेष से दूर रहने वाला, जिसका शास्त्रज्ञान, सदाचार तथा कुल ये तीनों अत्यन्त शुद्ध एवं निर्दोष हैं, जो ज्ञान-विज्ञान से तृप्त तथा लज्जाशील है वही ब्रह्मा के आसन पर बैठने का अधिकारी है।'

ब्राह्मण ग्रन्थों में भी चार ऋत्विजों का वरण करने की बात कही गई है-यज्ञ में मुख्य चार ऋत्विज होने चाहिएं जो यज्ञ कार्यों में दक्ष हों, उनमें एक ब्रह्मा हो जो यज्ञ की सभी व्यवस्थादि का ध्यान रखें, उनके निर्देश का सभी पालन करें, उनका सम्मान करें... जहां ब्रह्मा का सम्मान और उनके विधि विधानानुसार नहीं कार्य करते वह यज्ञ अविधि माना जाता है। और सभी अपनी-अपनी चलाने लगते हैं। इसलिए केवल ब्रह्मा के अतिरिक्त कोई व्यवस्था सम्बन्धी बात न कहे। (तां०4-9-13)। यजमान किस को यज्ञ का ब्रह्मा, उद्गाता, अध्वर्यु आदि बनाए इस सम्बन्ध में कहा गया है-मानो एक बार प्रजापति परमात्मा ने यज्ञ किया तो किस को कैसे चयन किया। अथवा राजा ने यज्ञ किया तो ऋग्वेद के ज्ञाता को ब्रह्मा बनाया, यजुर्वेद के ज्ञाता को अध्वर्यु और सामवेद के ज्ञाता को उद्गाता बनाया... यदि साधारण को बनाता है तो अविधिपूर्वक यज्ञ माना जाएगा जिससे यजमान की कामना पूर्ण नहीं हो सकती... यजुर्वेद (23-45 से 62) में ऋत्विजों का परस्पर संवाद दिया गया है जिससे इनकी श्रेष्ठता व महत्व का पता चलता है।

संस्कार विधि (गृहस्थाश्रम प्रकरण) में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने चारों वर्णों के स्वरूप लक्षण में ब्राह्मण के लक्षण में ही-**यजनं याजनम्** ये दोनों लिखे हैं अर्थात् यज्ञ करना और कराना। अन्य वर्णों के लिए यज्ञ करने का उल्लेख तो है मगर यज्ञ कराने का नहीं। इसी प्रकार यज्ञ कराकर दान-दक्षिणा लेना भी ब्राह्मण के लिए लिखा है, अन्यों के लिए नहीं अत: यज्ञ कराने का अधिकार वेदज्ञ ब्राह्मण को है... उदयपुर के महाराणा को महर्षि ने पत्र में लिखा था-'चारों वेदों के ब्राह्मणों का वरण करके यज्ञ करावें।' यज्ञ कराने वाला ब्राह्मण हो और साथ ही यह अधिकार गृहस्थी को ही दिया गया है-'उत्तम गृहस्थ, विद्वानों का वरण कर...' (सं०वि०), 'वेदवित्त, धार्मिक होता आदि सपत्नीक ब्राह्मण...' (सं०वि०)। पुरोहित की संज्ञा महर्षि जी ने इस प्रकार की है-'धर्मात्मा शास्त्रोक्त विधि को पूर्णरीति से जाननेहारा विद्वान् सद्धर्मी कुलीन निर्व्यसनी सुशील वेदप्रिय पूजनीय सर्वोपकारी गृहस्थ की पुरोहित संज्ञा है।' (सं०वि०) मनु महाराज जी ने भी (मनु०2-118) ब्राह्मण ही से यज्ञ कराने की बात कही है। अथर्ववेद (19-58-6) में विद्वानों के ऋत्विजों का, जो कि यज्ञ को अच्छी प्रकार से कराने में कुशल हैं, पत्नीसहित आने का विधान किया है... सामवेद (1478) में कहा गया है-**विप्रो यज्ञस्य साधनः**। यज्ञ को सम्पन्न कराने के लिए विप्र ही प्रमुखरूप से साधन है। बिना इस विप्ररूपी साधन के यज्ञ हो ही नहीं सकता। विद्वान्, वेदवित्, धार्मिक, कुलीन, ब्रह्मवेता सद्धर्मी ब्राह्मण को ही विप्र कहा जाता है। ऋग्वेद में विप्र के सम्बन्ध में कहा गया है (1-82-2) जो सात्विक भोजन करने वाला हो, शरीर और मन का मैल दूर करने वाला हो, प्रभु-स्तवन से आत्मप्रकाश ग्रहण करने वाला हो, सुमेधाबुद्धि-युक्त हो, इन्द्रिय-निग्रह से जीवन-यात्रा ठीक ढंग से पूरी करने वाला हो... जैसा कि पूर्व में कहा गया कि महर्षि दयानन्द जी ने मनुस्मृति के प्रमाणों से वर्णों के जो धर्म लिखे हैं उसके अनुसार भी केवल सपत्नीक गृहस्थ ब्राह्मण ही ऋत्विज और पुरोहित हो सकता है, अन्य वर्णस्थ या अन्य आश्रमस्थ नहीं। गो०ब्रा० (पू०1-13) में कहा गया है कि-**यद् वै यज्ञेऽकुशलता ऋत्विजो भवन्त्य-चरितिनो...** जब यज्ञ कर्म के न जानने वाले, अयोग्य, अकुशल व्यक्ति ऋत्विज बनकर यज्ञ कर्म कराते हैं तो उसे यज्ञ का नाश ही कहा जाता है।

(क्रमशः)

मानव शरीर और उसका पोषण-भक्ष्य अभक्ष्य

ले.-अविनाश चन्द्र 122, सैक्टर, 12-ए, पंचकूला

अथर्ववेद 2/29/4 मन्त्र इस प्रकार है:-

इन्द्रेण दत्तो वरुणेन शिष्टो मरुद्भिरुग्र: प्रहितो न आगन्।

एष वां द्यावापृथिवी उपस्थे मा क्षुधन्मा तृषत्।।

अर्थात् परमात्मा द्वारा रचित, गुरु विद्वानों द्वारा सुसंस्कृत और वीरों द्वारा उत्साहित यह ऐश्वर्यशाली मनुष्य द्यावापृथिवी की गोद में न तो भूखा रहे और न प्यासा रहे। मनुष्य के शरीर के पोषण की आवश्यकता पहले पूरी हो तभी वह सुसंस्कृत और वीर हो सकता है। शारीरिक पोषण से ही शारीरिक उन्नति मानसिक बल, क्रियाशीलता, बौद्धिक उन्नति, सामाजिक उन्नति, आत्मिक और आध्यात्मिक उन्नति संभव है।

मानव शरीर पंचभूतों से बना है, पृथ्वी, आकाश, जल अग्नि और वायु। इन पांच भूतों से सम्बन्धित पांच तन्मात्राएं हैं यथा-पृथ्वी की गन्ध, आकाश की शब्द, जल की रस, अग्नि की रूप और वायु की स्पर्श। इन्हीं तन्मात्राओं के अनुरूप शरीर में पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं-गन्ध के लिए नासिका, शब्द के लिए कान, रस के लिए जीभ, रूप के लिए नेत्र, और स्पर्श के लिए त्वचा। पांच ही कर्मेद्रियां हैं जिनसे मनुष्य क्रियाशील रहता है-हाथ, पैर, वाणी, उपस्थ और गुदा। मनुष्य शरीर के दो रूप हैं-एक स्थूल शरीर और दूसरा सूक्ष्म शरीर। पांच कर्मेन्द्रियां स्थूल शरीर है। सूक्ष्म शरीर में पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच प्राण, पांच तन्मात्राएं, पांच सूक्ष्मभूत (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार और आत्मा) तथा त्रिगुणात्मक प्रकृति के तत्व सत्व, रजस तथा तम होते हैं जो समय-समय पर मन, बुद्धि, चित्त को प्रभावित करते हैं। आयुर्वेद के अनुसार शरीर में तीन तत्व वात, पित्त, कफ होते हैं जो त्रिगुणात्मक प्रकृति से प्रभावित होते रहते हैं।

मनुष्य शरीर का आरम्भ गर्भाधान से तथा अन्त मृत्यु के समय आत्मा के शरीर छोड़ने पर हो जाता है। जन्म और मृत्यु के बीच की अवधि जीवन कहलाती है। इस अवधि में शरीर विकास को प्राप्त होता है-शिशु, बालक, किशोर, युवा फिर इसका ह्रास होता है-वृद्धावस्था के रूप में और अन्त में मृत्यु। शरीर का अन्त किसी समय भी हो सकता है। वृद्धावस्था से पहले बाल्यावस्था, युवावस्था में भी किसी कारण।

वेद का मनुष्य को आदेश है: (1) **कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतम समा: (यजु.)** और (2) मनुर्भव। अर्थात् मानवीय गुणों का विकास कर के कर्मशील रह कर मनुष्य सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करे। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मनुष्य जीवन का विभाजन चार आश्रमों में किया गया-

ब्रह्मचर्य-शारीरिक और बौद्धिक विकास, ज्ञान प्राप्ति का समय।

गृहस्थ-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र के कार्य (अपनी बौद्धिक और शारीरिक विकास/शक्ति के अनुसार) करते हुएष सन्तानोत्पत्ति, सन्तानों का पालन, उनकी शिक्षा का प्रबन्ध, पंच महायज्ञों का करना।

वानप्रस्थ सन्यास-गृहस्थ त्याग और सामाजिक कल्याण कार्यों में अपने को उत्सर्ग करना। अपने ज्ञान व अनुभव से परोपकार करना।

शरीर को जीवित रखने, उसके विकास तथा उसको क्रियाशील रखने के लिए मनुष्य को खान पान की आवश्यकता होती है। यह आवश्यकता जीवन पर्यन्त रहती है। महत्वपूर्ण बात यह है कि खान पान की आवश्यकता स्थूल शरीर को तो होती ही है उसके साथ ही सूक्ष्म शरीर का विकास भी खान पान पर निर्भर होता है। सूक्ष्म शरीर का निर्माण पूर्व जन्म के संस्कारों, वर्तमान जन्म की शिक्षा व संगति तथा स्थूल शरीर के खान पान से होता है। मस्तिष्क शरीर का अंग है और उसका सबन्ध बुद्धि से है। उत्तम खान पान से मस्तिष्क विकसित होगा और बुद्धि भी तेज होगी। इसी प्रकार मन का सम्बन्ध भी खान पान से है। कहावत है "जैसा खाए अन्न वैसा बने मन।" नशीले पदार्थ, तामासिक भोजन, अधिक गरिष्ट भोजन मन और बुद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

खान पान का निर्धारण निम्नलिखित बातों के अनुसार किया जाता है।

आयु-शिशु, बालक, युवा, वृद्ध को अलग अलग आहार चाहिए।

आश्रम-ब्रह्मचारी, गृहस्थ (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) वानप्रस्थ और सन्यासी सभी का खान पान अलग होता है।

समय-प्रात: दोपहर और सांयकाल के खान पान में भिन्नता होती है।

स्थान-समुद्रतट, मरुस्थल, पर्वत, पृथ्वी के उष्ण कटिबन्ध, शीत कटिबन्ध तथा समशीतोष्ण कटिबन्ध में स्थित स्थानों में खान पान भिन्न होता है।

ऋतु-ग्रीष्म ऋतु, शरद ऋतु, वर्षा में वनस्पतियों की उपलब्धि अलग होती है अत: खान पान में भिन्नता होती है।

स्वास्थ्य-स्वस्थ, रोगी, कमजोर, शक्तिशीली, गर्भिणी स्त्री, प्रसूता स्त्री का खान पान अलग होता है।

प्रकृति-वात, पित्त, कफ का शरीर में सन्तुलन रखने के लिए भी खान पान में परिवर्तन आवश्यक हो जाता है।

खान पान के विषय में निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी अपेक्षित होती हैं-

1. खान पान शुद्ध हो तथा खान पान का स्थान भी साफ सुथरा हो।

2. हित भुक, मित भुक, ऋत भुक (जो हित में हो, ऋतु के अनुकूल हो और उचित मात्रा में ही खाया जाए)

3. खान पान के समय हाथ मुंह साफ, मन प्रसन्न और स्थिर हो। उद्विग्नता, क्रोध, चिन्ता रखते हुए खाना लाभकारी नहीं होता।

4. खाना खूब चबा-चबाकर खाया जाए। पानी भी धीरे-धीरे पिया जाए।

5. भक्ष्य अभक्ष्य का ध्यान रखा जाए।

खान पान की शुद्धता-पानी साफ हो। आवश्कतानुसार ठंडा या गरम हो। मनुस्मृति में लिखा है "वस्त्रपूतं जलम् पिबेत"-वस्त्र से छान कर जल पीओ। इसके अतिरिक्त उबाल कर, रासायनिक प्रक्रिया से भी साफ किया जा सकता है। आजकल पानी साफ करने के उपकरण भी उपलब्ध हैं।

भोजन की शुद्धता के बारे में छान्दोग्योपनिषद का वचन है-"आहार शुद्धौ सत्व शुद्धि, सत्व शुद्धौ ध्रुवा स्मृति:" अर्थात् शुद्ध आहार से अन्त:करण की शुद्धि, बल, पुरुषार्थ, आरोग्य और बुद्धि की प्राप्ति होती है। गीता 17/8 से 17/10 में भी सात्विक, राजसिक, तामसिक भोजन की व्याख्या इस प्रकार की गई है:-

आयु सात्विकारोग्य सुख प्रीति-विवर्धना।

रस्यो: स्निग्धा: स्थिरा, हतकर आहारा सत्विकप्रिया।। गीता 17/8

अर्थात् आयु, सत्व, बल, आरोग्य, सुख तथा रसास्वादन की शक्ति बढ़ाने वाले रस युक्त, चिकने, स्थिरता प्रदान करने वाले, हृदय शक्तिवर्धक आहार सात्विक लोगों को प्यारे होते हैं।

कटुवम्लवणात्युष्णी तीक्ष्ण रूक्षविदाहिन:।

आहारा राजस्येष्टा दुख शोकभयप्रदा:।। गीता 17/9

कटु अर्थात् चटपटे खट्टे, नमकीन, बहुत गरम, तीक्ष्ण, रूक्ष और जलन पैदा करने वाले आहार रजोगुणी लोगों को प्यारे होते हैं। यह आहार दुख शोक और रोग में देने वाले होते हैं।

यातायातम् गत रसं पूति पर्युषितं च यत्।

उच्छिष्टमपि चामेव्यं भोजनं तामसप्रियम्।। 17/10 गीता

सारहीन, रसहीन, दुर्गन्ध युक्त, बासी, जूठा और अपवित्र भोजन तामसिक प्रकृति वालों का प्यारा होता है। **(क्रमश:)**

श्री कृष्ण जन्माष्टमी महोत्सव मनाया गया

आर्य समाज जवाहर नगर, लुधियाना में योगीराज श्रीकृष्ण जी का जन्ममहोत्सव रविवार 25 अगस्त, 2019 को प्रात: 8 से 10 बजे तक बड़ी श्रद्धा और उल्लास के साथ मनाया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ पवित्र यज्ञ कर किया गया जिसमें यज्ञ वेदि पर बैठे यजमानों ने बड़ी श्रद्धा से आहुतियां प्रदान की। यज्ञ के उपरान्त पं० रमेश कुमार जी शास्त्री व श्रीमती अनुपमा गुप्ता जी ने प्रभु भक्ति तथा भगवान कृष्ण जी के जीवन पर आधारित भजन सुना उपस्थित आर्यजनों को आनन्दित किया।

मुख्यवक्ता पं. बाल कृष्ण जी शास्त्री ने महाभारत में वर्णित श्री कृष्ण जी के जीवन चरित्र का अपने शब्दों में अति सुन्दर चित्रण किया व कुछ घटनाओं का वैज्ञानिक आधार भी बतलाया। उन्होंने कहा कि महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि महाभारत के अनुसार श्री कृष्ण जी का चरित्र आदर्श था जिन्होंने जीवन पर्यन्त कोई ऐसा कार्य नहीं किया। जिस पर ऊंगली उठाई जा सके। लेकिन वर्तमान समय में उन पर लोग मन घडन्त बातें पुराणों से लेकर लांछन लगाते हैं। आर्य समाज को लोगों को भगवान कृष्ण जी का सही स्वरूप समझा कर उन द्वारा ही मानव कल्याण की शिक्षाओं पर चलने के लिए प्रेरित करना चाहिए। आर्य समाज जवाहर नगर के प्रधान श्री विजय सरीन जी ने सबका धन्यवाद किया। श्री बृजेश पुरी अजय मोंगा जी विशेष सहयोग रहा। **अनिल कुमार महामन्त्री**

पृष्ठ 2 का शेष-वैदिक संस्कृति की विशेषता

प्रारम्भ करे।

मनु. 2.72 में कहा गया है कि गुरू के चरणों का स्पर्श हाथों को अदल बदल करके करना चाहिये।

मनु. 2.171 में कहा गया है- बैठे हुए गुरू से खड़ा होकर खड़े हुए गुरू के सामने जाकर, अपनी ओर आते हुए गुरू से उनकी ओर शीघ्र बढ़ कर, दौड़ते हुए गुरू के पीछे दौड़ कर प्रतिश्रवण और वार्तालाप करें। गौतम धर्म सूत्र 1.2.20 में कहा गया है, गुरू, पिता, माता, आचार्य आदि श्रेष्ठ जनों के सम्मुख कण्ड ढकना, गुरू की ओर पैर करके सोना तथा पैर फैलाना वर्जित है।

गौतम धर्म सूत्र-1.2.21 में कहा गया है-खखारना, हंसना, जम्भाई लेना और अंगुलियों को चटखाना ये कार्य भी गुरू के समक्ष न करे।

इसी प्रकार गो.ध.सू.1.2.26 में कहा गया है कि ब्रह्मचारी गुरू की शय्या की अपेक्षा नीची शय्या पर सोवे, गुरू के आसन की अपेक्षा नीचे आसन पर बैठे, गुरू के जागने से पहिले ही जागे और उनके सोने के बाद सोवे।

गच्छन्तं गुरूमनुगच्छेत्। गो. ध.सू.1.2.33

गुरू के चलने पर उनके पीछे पीछे चले। आचार्य की पत्नी एवं उनके पुत्रों से आचार्य के समान ही व्यवहार करे। गो.ध.सू.1.2.37

परन्तु गुरू पत्नी एवं उनके पुत्रों के विषय में उनका जूठा भोजन करना, उन्हें स्नान कराना, अलंकृत करना, पैर धोना, शरीर दबाना और दाहिने हाथ से दाहिने पैर और बांए हाथ से बांए पैर को छूकर प्रणाम करना ये कार्य वर्जित है। गो.ध.सू.1.28.38

पिता व अन्य वृद्ध जनों के लिये यजु. 2.3.4 में कहा गया है-

ऊर्ज वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम्।

स्वधास्थ तर्पयत मे पितृन।

पिता अपने पौत्र, स्त्री, नौकरों को सब दिन के लिये आज्ञा देवे कि जो मेरे पिता, पितामह आदि माता, मातामह आदि तथा आचार्य और इनसे भिन्न भी विद्वान् लोग, अवस्था अथवा ज्ञान से वृद्ध मान्य करने योग्य हों उन सबकी आत्माओं को यथायोग्य सेवा से प्रसन्न किया करो। सेवा करने के पदार्थ ये हैं- (ऊर्ज वहन्ती) जो उत्तम उत्तम जल (अमृतम्) अनेक विध रस (घृतम्) घी (पयः) दूध (कीलालम्) अनेक संस्कारों से सिद्ध किये रोग नाशक करने वाले उत्तम उत्तम अन्न (परिस्रुतम्) सब प्रकार के उत्तम उत्तम फल हैं इन पदार्थों से उनकी सेवा सदा किया करो (स्वधास्थ) हे पितृगण! तुम सब हमारे अमृत रूप भोगों के साथ सदा सुखी रहो।

धर्म सूत्रों में आचार पर अधिक बल दिया गया है-

भोजन कैसे करना, कैसे सोना, बैठक में वृद्धजनों के साथ कैसे बैठना आदि अनेक विषयों पर उनमें विस्तृत वर्णन है। देवों के इस प्रकार के वर्णन को देखकर पश्चिम के दार्शनिकों ने यह घोषित किया कि वेदों के ऋषियों को देवाधि देव परमेश्वर का ज्ञान नहीं था परन्तु यह विचार हास्यास्पद है। वेदान्त दर्शन ने प्रारम्भ में ही ईश्वर की सिद्धि में कई तर्क दिये हैं-

1. जनमाद्यस्य यत वेदान्त 1.1.2
2. शास्त्र योनित्वाद 1.1.3
3. ततु समन्वयात् 1.1.4
4. व्यति रेकानवस्थितेश्चान-प्रेक्षत्वाद् वेदान्त 2.24

इसी प्रकार स्टीफन डब्ल्यू हांकिग कहते हैं कि यदि सृष्टि की उत्पत्ति हुई है तो ईश्वर अवश्य है और वह निराकार, सर्वशक्तिमान तथा ज्ञान का अनन्त भण्डार है। वेदों में जिस ब्रह्म का वर्णन हुआ है वह विज्ञान के अनुरूप ही है।

अकामो धीरो अमृतः स्वयं भूरसेन तृप्तोनकुतश्चनोन।

अथर्व. 10.8.44

वह प्रभु (अकामः) सब प्रकार की कामनाओं से रहित है (धीर) बुद्धिपूर्वक गति करने वाला है। (अमृतः) अविनाशी है। (स्वयंभू) सदा से स्वयं होने वाला है (रसेन तृप्त) रसों से तृप्त है। (कुतचश्नोन) किसी से न्यून नहीं है।

सपर्यगाच्छुक्रमकायस्नाविरं शुद्धमपापविद्धं।

कवि र्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यद- धाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।

यजु. 40.8

ईश्वर का इसमें अच्छा वर्णन है। ईश्वर एक है इसे अथर्ववेद में तीन मंत्रों में व्यक्त किया है।

न द्वितीयो न तृतीय श्चतुर्थो नाप्युच्यते। अथर्व. 13.4.16

ईश्वर सभी का स्वामी है चाहे कोई श्रेष्ठ हो और कोई अधम।

त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम। त्वं राजा जनानाम्।

ऋ.8.64.3

(इन्द्र) हे परमात्मन्। (त्वम्) तू (सुतानाम्) शुभकर्मियों का तू (ईशिषे) तू स्वामी है (असुतानाम) कुकर्मियों का भी (त्वम्) तू स्वामी है न इनका अपितु (जनानां त्वं राजा) सर्व जनों का तू ही स्वामी है। इसके विपरीत बाइबिल और कुरान शरीर कहती है-मत्ती 22.23

मैं इब्राहीम का परमेश्वर, इसहाक का परमेश्वर और याकूब का परमेश्वर हूँ। इसी प्रकार कुरआन में कहा गया है-और इब्राहीम के दीन से कौन मुंह फेर सकता है। इसके अलावा जो निहायत नादान हो। हमने उसे दुनिया में भी चुना था और आखिर में भी वहब नफे में रहेंगे। सूर बकर 22 आयत 130

यज्ञ का दूसरा स्कन्द संगतिकरण है। यज्ञ के लिये हवि बनाते समय हम विभिन्न जड़ी बूटियों को विभिन्न मात्रा में इसलिये मिलाते हैं कि ये सब मिल कर यज्ञ में आहूत होकर ऐसी गैसों का निर्माण करें जो समाज को नाना प्रकार के रोगों से मुक्त कर उन्हें स्वास्थ्य लाभ दें। इसी प्रकार समाज में विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों में ऐसा समन्वय किया जावे कि एक श्रेष्ठ समाज का निर्माण हो जावे तथा प्रत्येक व्यक्ति में मानवता की भावना का विस्तार होवे।

ऋ. 10.53.6 में कहा गया है- मनुर्भवजनया दैव्यं जनम्।

मनुष्य बनो और मनुष्य बनकर ही सन्तुष्ट मत हो जाओ वरन् अपने जीवन को विकास के शीर्ष पर पहुंचाते हुए देव सन्तानों को जन्म दो। इसके लिये हमें जीवन को व्रतमय बनाना होगा।

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयंतन्मे राध्यताम्।

इदमहमनृतात सत्यमुपैमि।

यजु. 1.5

हे तेजस्वी, व्रतपति परमात्मन्। मैं इस समय एक व्रत धारण कर रहा हूँ। इस व्रत के अनुसार मैं सदैव सत्य का व्यवहार करूंगा तथा असत्य से दूर रहूंगा। इस व्रत में सफलता पाने के लिये आप मुझे योग्य बनाइये।

मनुस्मृति में कहा गया-

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रयात् मा ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।

प्रियं च नानृतं ब्रूयात् ऐष धर्म सनातन।

सनातन धर्म यही है कि हम सदा सत्य ही बोलें, प्रिय मधुर वाणी में ही बोलें, प्रिय लगने वाला असत्य न बोलें तथा अप्रिय सत्य भी न बोलें। हम सब मिलकर एक दूसरे के सुख दुःख के मार्ग बनकर इस संसार में शांति स्थापित करें।

वेद ने कहा, 'वसुधैव कुटम्बकम्' सारा संसार एक परिवार है जैसे हम अपने परिवार की सुख समृद्धि के लिये प्रयत्न करते हैं वैसे ही सबके लिये करें। इतना ही नहीं वेद ने इससे आगे बढ़ कर फिर कहा यत्र विश्वं भवेत्येक नीड्म्। यहां इस संसार को एक पक्षी के घोंसले के समान बना दो जिसमें सम्पूर्ण विश्व सुख, शांति और आनन्द का अनुभव कर सके। इस भावना का विस्तार करते हुए वेद कहता है कि जब तक दो की भावना रहेगी तब तक भय से छुटकारा पाना असंभव है। यजुर्वेद ने इस दो की भावना को समाप्त करते हुए कहा-

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्या- त्मैवाभूद्विजानतः।

तत्र को मोह कः शोक एकत्वमनुपश्यत। यजु. 40.7

(यस्मिन्) जिस ज्ञान में (विजानतः) विशेष कर ध्यान दृष्टि से देखते हुए को (सर्वाणि) सब (भूतानि) प्राणीमात्र (आत्मा एव) अपनी आत्मा के समान ही (अभूत) अनुभव होते हैं। (तत्र) वहां (एकत्वम्) अद्वितीय भाव को (अनु पश्यत) अनुकूल योगाभ्यास से साक्षात् देखते हुए योगी को (कः): कौन कैसै (मोहः) मूढ़ावस्था और (कः) कौन कैसा (शोकः) क्लेश होता है अर्थात् कुछ भी नहीं।

यज्ञ का तीसरा स्कन्द है दान, दक्षिणा। यज्ञ उस समय तक अपूर्ण रहता है जब तक ब्रह्मा, ऋत्विग्, होता और उद्गाता को दक्षिणा नहीं दे दी जाती है। परन्तु दान के अधिकारी वे सब मनुष्य हैं जो किसी कारणवश अभाव का जीवन जी रहे हैं। दान उन सब तक पहुंचना चाहिये। दान देने की प्रक्रिया अनवरत् चलती रहनी चाहिये।

तैति. उप. शिक्षावल्ली अनुवाक एकादश श्लोक 3 में कहा गया है-

श्रद्धया देयम्। अश्रद्धया देयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविदा देयम्।

श्रद्धा से दान करना चाहिये। अश्रद्धा से दान करना चाहिये। प्रसन्नता से दान करना चाहिये।

लज्जा से दान करना चाहिये। भय से दान करना चाहिये। प्रेम भाव से दान करना चाहिये। अब तक हमने संक्षेप में केवल देव यज्ञ पर विचार किया है। वैदिक संस्कृति में पञ्चयज्ञ दैनिक किये जाने का आदेश है- ब्रह्म, यज्ञ, देव यज्ञ, पितृ यज्ञ, अतिथियज्ञ और बलिविश्वदेव यज्ञ।

(क्रमशः)

आर्य समाज नवांशहर का नवदिवसीय श्रावणी उपाकर्म एवं जन सम्पर्क अभियान कार्यक्रम सम्पन्न

आर्य समाज नवांशहर का नवदिवसीय श्रावणी उपाकर्म एवं जन सम्पर्क अभियान 15 अगस्त से 24 अगस्त तक बड़ी धूमधाम एवं हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर विभिन्न परिवारों में सत्संग एवं हवन यज्ञ किया गया जिसमें आर्य समाज नवांशहर के कार्यकारी प्रधान श्री विनोद भारद्वाज जी, वरिष्ठ सदस्य श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल जी, श्री वीरेन्द्र सरीन जी, श्री कुलवन्त राय जी, श्री जिया लाल जी मंत्री एवं अन्य आर्य समाज के सदस्यों ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया। इस अवसर पर सम्बोधित करते हुये आर्य समाज के कार्यकारी प्रधान श्री विनोद भारद्वाज जी। यह सारा कार्यक्रम आर्य समाज के पुरोहित श्री अमित शास्त्री जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ।

आर्य समाज नवांशहर का नवदिवसीय श्रावणी उपाकर्म व जन सम्पर्क अभियान 15 अगस्त से 24 अगस्त 2019 तक विभिन्न यजमानों के घरों में सोत्साह सम्पन्न हुआ। इस कड़ी में 15 अगस्त को श्रीमती एवं श्री अश्विनी मुरगई के निवास स्थान टीचर कालोनी नवांशहर, 16 अगस्त को श्रीमती एवं श्री विनय विकास अरोड़ा रणजीत नगर नवांशहर, 17 अगस्त को श्रीमती एवं श्री प्रो. मनीष माणिक विकास नगर नवांशहर, 18 अगस्त को श्रीमती एवं श्री गुरचरण जी नजदीक पंजाब फोटो स्टेट नवांशहर, 19 अगस्त श्रीमती एवं श्री बलदेव कौशल जी हरगोविन्द नगर नवांशहर, 20 अगस्त को श्रीमती एवं श्री महेश चोपड़ा जी हीरा जट्टा मुहल्ला नवांशहर, 21 अगस्त को श्रीमती एवं श्री राज कुमार जी कुलाम रोड नवांशहर, 22 अगस्त को श्रीमती एवं श्री बलिहार सिंह जी बैंस राहों रोड नवांशहर, 23 अगस्त को श्रीमती एवं श्री एस.के. पुरी जी फ्रैंडज कालोनी नवांशहर, 24 अगस्त को प्रो. विकास तेजी द्वारा ए.सी. टी कालेज नवांशहर के गायत्री कुंज परिसर में आर्य समाज के पुरोहित श्री अमित शास्त्री जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। यज्ञ के पश्चात अपने प्रवचनों में यज्ञ ब्रह्मा ने श्रावणी उपाकर्म की महत्ता को बताते हुये कहा कि आज के युग में जो दौड़ भाग चल रही है उसके मद्देनजर अगर मानसिक शान्ति की इच्छा है तो महर्षि दयानन्द की उद्घोषणा की ओर ध्यान देना अति आवश्यक है। महर्षि दयानन्द ने कहा था कि वेदों की ओर लौटो। जब तक मनुष्य वेदों के अनुसार बताये मार्ग पर नहीं चलेगा तब तक अतृप्त और अशान्त रहेगा क्योंकि वेद भारतीयों के लिये सर्वस्व है। प्राचीनतम, पवित्रतम तथा ज्ञान विज्ञान से संवलित होने के साथ साथ इससे प्रतिदिन उदात्त मानवीय जीवन को उत्थान की ओर प्रेरित होने का आदेश, उपदेश व संदेश है। वेदों में विश्व बन्धुत्व, विश्व शान्ति, एक वर्ग से दूसरे वर्ग के प्रति, एक समुदाय से दूसरे समुदाय के प्रति, एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र के प्रति, स्वार्थ सिद्धि से ऊपर उठ कर सौहार्द, समन्वय तथा सहयोग की भावना का संदेश दिया गया है। वेदों के मार्ग पर चलने से ही सर्वत्र सामाजिक अभ्युदय की स्थापना संभव है इसलिये आज मनुष्य को वेदों की ओर लौटना बहुत आवश्यक है। आज के दिशा विहीन भौतिक वाग्जाल से उभरने का एक मात्र मार्ग है वेदों का अनुसरण करना, वर्तमान में मानवता एवं मानवीय मूल्यों को ह्रास करने वाली समस्त कुवृत्तियों, दोष दुख, आपदा, घृणा, रक्तपात, युद्ध, हिंसा एवं भ्रष्टाचार आदि का कारण वेद ज्ञान की अवहेलना ही है। वेद, जाति, लिंग, धर्म, नस्ल एवं देश की सीमाओं से परे समस्त मानव जाति के लिये सार्वभौमिक सिद्धान्तों की स्थापना करता है। भगवान राम व योगिराज कृष्ण जी के जीवन काल में हमारा देश विश्व गुरु विश्व वन्दनीय अगर रहा है तो इसका एकमात्र कारण था उस समय के लोगों का वेद ज्ञानानुसार जीवन यापन। आज उस समय से भी ज्यादा घोर तम इस धरा पर छा रहा है और इस तम को छिन्न भिन्न केवल मात्र वेद ज्ञान रूपी सूर्य ही कर सकता है।

इस अवसर पर आर्य समाज के कार्यकारी प्रधान श्री विनोद भारद्वाज जी ने सभी यजमानों का धन्यवाद करते हुये कहा कि हमारा यह श्रावणी पर्व व श्री कृष्ण जन्माष्टमी मनाना तभी सार्थक है जब हम सुने हुये प्रवचनों पर विचार करें व उन्हें अपने जीवन व्यवहार में उतार कर लोगों के सामने उदाहरण बन सकें क्योंकि जब तक सुनी हुई बात मनन के बाद जीवन में नहीं उतरती तब तक ज्ञान अधूरा है। व्यवहार में ज्ञान आने पर लोग स्वयं उसका अनुसरण करना प्रारम्भ करते हैं। इस अवसर पर मुख्य रूप से नौ दिनों तक यह महानुभाव यज्ञ में भाग लेते रहे सर्वश्री जिया लाल जी मंत्री आर्य समाज, श्री कुलवन्त राय शर्मा कोषाध्यक्ष, श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल, श्री अमर सिंह, श्री राजीव कश्यप, श्री वीरेन्द्र सरीन, श्री एस.के.पुरी, श्री एस.के. बरूटा, श्री ललित शर्मा, श्री ललिता मेहता, पाठक श्री अनित शर्मा, श्री अरविन्दरनारद, अक्षय तेजपाल श्री राजिन्द्र सिंह गिल प्रिंसीपल, इत्यादि ने इस आयोजन को सफल बनाया। प्रधान जी ने इनका सब का हार्दिक धन्यवाद किया।

विनोद भारद्वाज
कार्यकारी प्रधान आर्य समाज नवांशहर

आर्य समाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर का वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न

आर्य समाज जालन्धर अड्डा होशियारपुर का वेद प्रचार सप्ताह दिनांक 12 अगस्त से 18 अगस्त 2019 रविवार तक बड़े उत्साहपूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर आर्य जगत के उच्चकोटि के विद्वान् आचार्य महावीर जी मुमुक्षु मुरादाबाद, आचार्य सुरेश शास्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, भजनोपदेशक श्री राजेश अमर प्रेमी जी जालन्धर के प्रवचन व भजन हुए। प्रातः 7:15 से 8:30 तक यजमान परिवारों के द्वारा स्वास्ति याग के मन्त्रों द्वारा यज्ञ किया गया। रात्रिकालीन सत्संग में 7:45 से 9:00 बजे तक भजन व प्रवचन होते रहे। आचार्य महावीर जी मुमुक्षु ने अपने प्रवचनों में ऋषि दयानन्द के उपकारों एवं उनके द्वारा दिए गए वेद ज्ञान की महत्ता को सुन्दर ढंग से समझाया। 18 अगस्त दिन रविवार को स्वास्ति याग यज्ञ की पूर्णाहुति की गई। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य महावीर मुमुक्षु तथा आचार्य सुरेश शास्त्री जी ने वेद मन्त्रों की पावन ऋचाओं के द्वारा यज्ञ सम्पन्न किया। मुख्य यजमान के पद को आर्य समाज के महामन्त्री श्री सोहन लाल सेठ जी ने सपरिवार सुशोभित किया। यज्ञ के पश्चात सप्ताह भर बनने वाले सभी यजमानों को सामूहिक आशीर्वाद दिया गया तथा प्रसाद वितरण किया गया। तत्पश्चात श्री अनिल गुप्ता जी ने प्रभु भक्ति का मधुर भजन प्रस्तुत किया। तत्पश्चात कु. सेजल सेठ ने एक सुन्दर कविता सुनाई। श्री राजेश अमर प्रेमी जी ने अपने मधुर भजनों के द्वारा इस कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हुए ऋषि दयानन्द की महिमा का वर्णन किया। तत्पश्चात आचार्य महावीर जी मुमुक्षु तथा आचार्य सुरेश शास्त्री जी ने श्रावणी उपाकर्म एवं वेद प्रचार की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए इस पर्व की महिमा को समझाया। मंच का संचालन लभ्भू राम दोआबा स्कूल के प्रिंसिपल एवं कार्यक्रम के संयोजक श्री श्रवण बत्रा जी ने किया। आर्य समाज के प्रधान श्री विनोद सेठ जी ने सम्पूर्ण कार्यक्रम का उचित व्यवस्था का उत्तरदायित्व निर्वहन किया। कार्यक्रम के अन्त में आर्य समाज के महामन्त्री श्री सोहन लाल सेठ जी ने सभी विद्वानों एवं आए हुए श्रोताओं का धन्यवाद करते हुए कहा कि आर्य समाज के द्वारा प्रतिवर्ष वेद सप्ताह का आयोजन किया जाता है ताकि हम अपनी संस्कृति और सभ्यता के साथ जुड़े रहें। कार्यक्रम में तन-मन और धन से सहयोग देने वाले सभी दानी महानुभावों का आर्य समाज की ओर से धन्यवाद किया। शान्तिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन किया गया। सभी श्रद्धालुओं ने ऋषि लंगर ग्रहण किया।

सोहन लाल सेठ
महामन्त्री आर्य समाज

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित।
सम्पादक-प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 **E-mail: apspunjab2010@gmail.com,**
www.aryapratinidhisabha.org